RESEARCH REVIEW JOURNALS
Volume-03
Issue-10
October-2018

ISSN: 2455-3085 (Online)
RESEARCH REVIEW International Journal of Multidisciplinary
www.rrjournals.com[Peer Reviewed Journal]

कौटिल्यकालीन राज–व्यवस्था में वैदेशिक संबध

डॉ. रेणु सिंह

(+2 शिक्षिका) राजनीति विज्ञान श्री रामलखन सिंह यादव सर्वोदय उच्चतर माध्यमीक विद्यालय पुनाईचक पटना –23

ARTICLE DETAILS

Article History
Published Online: 10 October 2018

Keywords
मण्डल, संधि, विजिगीशु राजा, अन्तर्राज्य, दूतों, राजनय, शाड्गुण्य सिद्धांत।

ABSTRACT

कौटिल्य का अर्थशास्त्र राज–व्यवस्था संबंधी महत्वपूर्ण ग्रंथ है। इसमें समस्त राजनीतिक को समाहित किया गया है। इसमें समस्त राजनीतिक विचारों को समाहित किया गया है। यह ग्रंथ एक ओर तो राज्यशास्त्र संबंधी सिद्धांत का उल्लेख करता है तो दूसरी ओर राज–व्यवस्था अथवा प्रशासन संबंधी व्यावहारिक निर्देश देता है।

राजनीतिक विचारक के रूप कौटिल्य ने न कवल राज्य के आंतरिक प्रशासन के सिद्धांतो का वर्णन किया है। उसके अनुसार एक राज्य द्वारा दुसरे राज्यों के साथ अपने संबंध निर्धारित किए जाने चाहिए। उसने विदेशों में राजदूत और गुप्तचर रखने के विषय पर भी विचार किया है।

कौटिल्य ने दूसरे राज्यों के साथ व्यवहार संबंध में दो सिद्धांतों का विवेचन किया पड़ोसी राज्यों के साथ संबंध स्थापित करने के लिए मण्डल सिद्धांत और अन्य राज्यों के साथ व्यवहार निश्चित करने के लिए षाड्गुण्य नीति।

भूमिका :–

अन्तराज्य संबंध भी राजा तथा केंद्रीय शासन की जिम्मेवारी थी। युद्ध एवं संधि के सार्थक उपयोग पर हीं किसी राज्य की स्वतंत्रता निर्भर करती है। एक स्वतंत्र राज्य में ही पजा सुख एवं समृद्धि का विकास संभव हैं। राज्य के बीच मतभेद के निराकरण के लिए युद्ध को अंतिम उपाय के रूप में प्राचीन कालीन चिन्तकों ने उल्लेख किया है। आपसी सदभाव तथा युद्ध के परित्याग को राज्यशास्त्रीयों ने अधिक महत्व दिया हैं। वैसे महत्वाकांक्षी राजा पड़ोसी राज्यों पर विजय प्राप्त करके अधिक शक्तिशाली बनने की लालसा रखता था। ऐसी परिस्थिति में शक्ति संतुलन बनाये रखने के लिए ;ताकि प्रत्येंक राज्य की प्रजा शांतिपूर्वक अपने कार्य कर सकेद्ध कौटिल्य ने मंडल सिंद्धांत का प्रतिपादन किया ह।

मण्डल सिद्धान्त :–

कौटिल्य ने राज्यों के मंडल की कल्पना वृत के रूप में की है और इन्हें विभिन्न श्रेणियों में बॉटा है–[107] इस वृत के केन्द्र में राजा होता है, जो अपने पड़ोसी राज्यों को जीतकर अपने राज्य में मिलाने का प्रयास करता है, क्योकि मानवीय स्वभाव के अनुसार प्रत्येक राजा राज्य विस्तार की नीति को अपनाता है।

कौटिल्य के शब्दों में, विजिगीषु राजा की विजय यात्रा में कमशः शत्रु ,अरि, मित्र, अरिमित्र, मित्र–मित्र और अरिमित्र–मित्र ये पॉच प्रकार के राजा सम्मिलित है। इसी प्रकार उसके पीछे कमशः पार्ष्णिग्राहासार और आकन्दासार–ये चार राजा होते हैं। विजिगीषु राजा सहित आगे–पीछे के राजाओं को मिलाकर एक राजमण्डल कहलाता है।

मण्डल में बारह राज्यां को उल्लेख किया जा सकता है

1. विजिगीषु इसका स्थान मण्डल के बीच में होता है और यह अपने राज्य के विस्तार की आकांक्षा रखता है।
2. अरि विजिगीषु के सामने वाला राज्य उसका शत्रु होता है।
3. मित्र अरि के सामने वाला राज्य मित्र अरि का शत्रु और अजिगीषु का मित्र हाता है।
4. अरिमित्र मित्र के सामने वाला राज्य अरिमित्र होगा, ये अरि का मित्र और विजिगीषु का शत्रु होगा।
5. मित्र–मित्र अरिमित्र के सामने होने के कारण ये उसका शत्रु होगा, पर मित्र राज्य का मित्र होने के कारण ये राज्य विजिगीषु का मित्र होगा।
6. अरिमित्र–मित्र मित्र–मित्र के सामने वाला राज्य अरिमित्र–मित्र कहलाता है, क्योंकि अरिमित्र राज्य का मित्र होता है और इसलिए अरि राज्य के साथ भी उसका सम्बन्ध मैत्रीपूर्ण होता है।
7. पार्ष्णिग्राह ये विजिगीषु के पीछे का राज्य होगा। अरि की तरह वह भी विजिगीषु का शत्रु ही होता है।

RRIJM 2015, All Rights Reserved

8. आकन्द ये पार्ष्णिग्राह के पीछे का राज्य होगा, जो विजिगीषु का मित्र होगा।
9. पार्ष्णिग्राहासार ये राज्य आक्रन्द के पीछे होगा, ये राज्य पार्ष्णिग्राह का मित्र होता है
10. आकन्दासार ये पार्ष्णिग्राहासार के पीछे होगा और आक्रन्द का मित्र होता है।
11. माध्यम ये प्रदश विजिगीषु और अरि राज्य की सीमा से लगा होगा। ये दोनो से अधिक शक्तिशाली होगा, जिससे ये दोनो से अलग–अलग मुकाबला करने के साथ–साथ दोनों की सहायता भी करता है।
12. उदासीन इसका प्रदेश विजिगीषु, अरि और मध्यम इन तीनों राज्यों की सीमाओं से अलग होता है। यह राज्य बहुत शक्तिशाली होता है, जो सहायता या मुकाबला दोनो स्थिति में होता है।

मंडल सिद्धांत में राज्य और राजा को एक ही मानकर उनके गुणों एवं लक्षणों का विवेचन किया गया है।[108] कौटिल्य ने विजिगीषु राजा अथवा राज्य को केंद्र में रखकर अन्य राज्यों को वर्गीकृत किया ह। राज्य को इन राज्यों के चरित्र को ध्यान में रखकर ही अपनी नीति–निर्धारित करना चाहिए। ये राज्य शत्रुवत् होंगे अथवा मित्रवत्। कौटिल्य युद्ध एवं विग्रह दोनों का उल्लेख करता है तथा वह विजिगीषु राजा को परामर्श देता है कि वह किन परिस्थितियों में युद्ध करे तथा किन परिस्थितियों में संधि करें।

कौटिल्य के मंडल सिद्धांत को आधुनिक युग के लिए अप्रासंगिक नहीं माना जा सकता। अभी हमारे मस्तिष्क में हिटलर का उदाहरण ताजा है और अगर हम तत्कालीन राजनीति का अध्ययन करें तो मंडल सिद्धांन्त प्रासंगिक प्रतीत होगा। वैसे यह सही है कि यह सिद्धांत छोटे–छोटे राज्यों के लिए अधिक उपयुक्त है। मध्यम राज्य के रूप में अमेरिका का उदाहरण दिया जा सकता है। वस्तुतः कई त्रुटियों के बावजूद कौटिल्य का मंडल सिद्धांत अन्तर्राज्य सम्बन्धों और विदेश नीति के क्षेत्र में आज भी महत्वपूर्ण और प्रासंगिक है।[109]

षाड्गुण्य नीति :–

कौटिल्य ने विदेश नीति के लिए वाड्गुण्य नीति का उल्लेख किया है। ये छः गुण हैं–संधि, विग्रह, आसन, यान, संश्रय और द्वैधीभाव। छः लक्षणों वाली षाड्गुण्य नीति ;जतंजमहपब च्वसपबलद्ध के द्वारा कौटिल्य ने अन्तराष्ट्रीय सम्बन्धों में, जिसमें परराष्ट्र नीति या विदेश नीति को जिसे अपने राष्ट्र के हित के अनुकूल परिवर्तित किया जा सके, को शामिल किया है। इस नीति का समर्थन मनु ने भी किया है और इसका वर्णन महाभारत में भी मिलता है।

कौटिल्य ने षाडगुण्य नीति के प्रयोग पर अपने विचार व्यक्त किए है– शत्रु की तुलना में अपने को निर्बल समझने पर सन्धि कर लेनी चाहिए। यदि शत्रु की तुलना में स्वयं को बलवान समझा जाए, तो विग्रह कर देना चाहिए। विदेश नीति पर आचार्य वातव्याधि का मत है कि विदेश नीति के निर्धारण में दो गुण संधि और विग्रह है। बाकी चार गुण (यान, आसन, संश्रय और द्वैधीभाव) इस नीति के बाकी पहलू है, पर कौटिल्य ने इन छः गुणों को विदेश नीति के आधार के रूप में वर्णन किया है।

कौटिल्य की षाड्गुण्य नीति का वर्णन

सन्धि :–

सन्धि से आशय दो राजाओं के बीच हुआ समझौता। ये समझौता एक राजा को लाभ करा सकता है, हानि करा सकता है या दोनो को बराबरका लाभ या हानि करा सकता है। इस प्रकार कौटिल्य अपने राजा को सन्धि के लिए तब सुझाव देता है, जब दूसरे राजा के कार्य को रोक सके या उसके कार्यो से अपना लाभ प्राप्त कर सके या उसे विश्वास में लेकर उसे समाप्त कर सकें।

कौटिल्य के अनुसार सन्धि के निम्नालिखित प्रकार हैं

- होन सन्धि
- दण्डोपनत सन्धि
- भूमि सन्धि
- कर्म सन्धि
- अनवसित सन्धि
- अति सन्धि
- सम–विषम सन्धि आदि

विग्रह या युद्ध :–

विग्रह का अर्थ युद्ध से लगाया जाता है। कौटिल्य ने अपने राजा को युद्ध करने का सुझाव तभी दिया है, जब वह शत्रु से सबल हो। कौटिल्य ने तो यह भी सुझाव दिया है कि युद्ध से जो लाभ प्राप्त होना है, यदि सन्धि से लाभ की प्राप्ति हो जाती है, तो विग्रह को टालने का प्रयास किया जाना चाहिए, ताकि धन और जन दोनो की हानि से बचा जा सके।

कौटिल्य ने अपने दर्शन में बताया है कि युद्ध के लिए सेना युद्ध के लिए शक्तियॉ और युद्ध के प्रकार को जानकर ही विग्रह किया जाना चाहिए। कौटिल्य ने सेना के चार अंग बताएँ हैं–पैदल, हाथी,

RRIJM 2015, All Rights Reserved

घोड़े, एवं रथ। कौटिल्य ने युद्ध की तीन शक्तियों का उल्लेख किया है, जिनसे उत्साह, शक्ति अर्थात् सफल युद्ध के लिए आवश्यक नैतिक बल, प्रभाव शक्ति अर्थात् शस्त्र सामग्री, मन्त्र शक्ति अर्थात् मन्त्रणा और कूट नीति शक्ति से है।

कौटिल्य के अनुसार युद्ध के तीन प्रकार निम्न है

1. प्रकाश युद्ध देश या काल के निश्चित होने पर की गई घोषणा।
2. कूट युद्ध योजना में तत्काल परिवर्तन करके, धोखा देकर, भय दिखाकर आदि तरीकों से किया गया युद्ध।
3. तुष्णी युद्ध शत्रु को विश्वास में लेकर उसे जहर पिलाकर वेश्याओं के साथ लिप्त कराकर आदि तरीकों से किया गया युद्ध।

यानः–

कौटिल्य ने विग्रह में स्पष्ट किया है कि यदि बिना युद्ध के काम चल जाए तो विग्रह से बचना चाहिए पर यान में एसा नहीं है इसका अर्थ ही है वास्तविक युद्ध। कौटिल्य के शब्दों में, यदि समझे कि शत्रु के कर्मो का नाश यान से हो सकेगा और मैने अपने कर्मो की रक्षा का पूरा प्रबन्ध कर दिया है तो यान का आश्रय लेकर अपनी उन्नति करें।

कौटिल्य का विचार है कि यान किन परिस्थितियों मे किया जाना चाहिए– जब देखेकि शत्रु व्यसनों में फॅसा है, उसका प्रकृतिप्रमुख मण्डल भी व्यसनों में उलझा है। अपनी सेनाओं से पीड़ित उसकी प्रजा उससे विरक्त हो गई, राजा स्वयं उत्साहहीन है, पकृतिमण्डल में परस्पर कलह है, उसको लोभ देकर फोड़ा जा सकता है, शत्रु,अग्नि,जल,व्याधि,संकामक रोग के कारण वह अपने वाहन, कर्मचारी और कोष की रक्षा न कर सकने के कारण क्षीण हो चुका है, तो ऐसी दशाओं में विग्रह करके चढ़ाई कर दं।

आसन :–

आसन से आशय तटस्थता है। इसके अर्थ से आशय यह है कि राजा अपनी स्थिति की मजबूट करने के लिए कुछ समय के लिए प्रतीक्षा स्वरूप बैठा रहे। कौटिल्य ने आसन के दो प्रकार बताए हैं

1. सन्धाय आसन जब सन्धि करके चुप बैठते है।
2. विग्रहा आसन विजिगीषु और शत्रु समान शक्ति रखते हो, सन्धि की इच्छा रखते हो कुछ समय के लिए चुपचाप बैठ जाते हैं।

संश्रयः–

इसका अर्थ है बलवान राजा की शरण लेना। शरण में उस राजा के पास जाना चाहिए जो शत्रु से बलवान हो। कौटिल्य का मत है यदि ऐसा बलवान राजा कोईन मिले तो अपने शत्रु राजा का ही आश्रय लेना चाहिए।

द्वैधीभव :–

द्वैधीभाव से आशय है दोहरे भाव के साथ व्यवहार का किया जाना, जिसमें एक राजा के साथ सन्धि और दूसरे से विग्रह। अतः कौटिल्य बताते है कि सन्धि बलवान से और विग्रह निर्बल से करनी चाहिए। कौटिल्य ने विदेश नीति के निर्धारण में छः तत्वों के अतिरिक्त चार उपायों की चर्चा की है, जो निम्न है

निर्बल राजा के साथ उपाय

– साम दुर्बल राजा को शन्तिपूर्वक समझा–बुझा दिया जाना चाहिए।

– दाम या कुछ धन देकर अपने पक्ष में किया जाना चाहिए।

बलवान राजा के साथ उपाय

– दण्ड जब तीनों उपाय सार्थक न हो, तब दण्ड का सहारा लेना चाहिए।

– भेद शक्तिशाली शत्रु से विजय न पाने की स्थिति में फूट डालनी चाहिए, ताकिउसकी शक्ति क्षीण हो सके।

वातव्याधि संधि में विग्रह को ही मुख्य गुण मानते हैं और बाकी को इन्हीं में निहित मानते हैं परन्तु कौटिल्य इन चारों को संधि विग्रह से अलग मानते हैं।[110] कौटिल्य के अनुसार अगर राजा अपने को शत्रु की तुलना में दुर्बल समझता हो तो सधि की नीति और अगर बलवान समझता हो तो विग्रह अर्थात् युद्ध की नीति अपनाना चाहिए। कौटिल्य ने शत्रु पर युद्ध की घोषणा करके चुप बैठने की स्थिति को आसन कहा है अर्थात् अपनी वृद्धि के लिए चुपचाप बैठे रहना आसन है। [111] यान विग्रह का ही अंग है। इसे आकमण की संज्ञा दी जा सकती है। संश्रय की स्थिति दुर्बल राजाओं के लिए जब वह किसी बलवान राजा के भय से किसी बलवान राजा के शरण में आता है। कोई राजा किन परिस्थितियों द्वारा इस नीति का अवलम्बन करें–इस पर कौटिल्य ने विचार किया है। द्वैधीभाव आर्थात् दोहरी नीति उसे कहा गया है जब विजिगीषु एक राजा से संधि करे और दूसरे के साथ विग्रह। कौटिल्य ने इस विभिन्न नीतियों को कब

और किन परिस्थितियों में राजा को अपनाना चाहिए इस बात का भी विस्तार से उल्लेख किया है। कोटिल्य का षाड्गुण्य सिद्धांत आधुनिक काल के लिए अप्रासंगिक प्रतीत हाता है। यह सिद्धांत साम्राज्यवादी पृष्ठभूमि की ओर संकेत करता है। आधुनिक काल में ऐसी प्रवृति की कल्पना कठिन है। कौटिल्य ने षाड्गुण्य सिद्धांत के विभिन्न पहलुओं पर विचार किया ह। अतः युद्ध एवं संधि राजा अथवा केन्द्रीय शासन की जिम्मेदारी था।

अन्तर्राज्य सम्बन्ध का दूसरा अंग था दूतों का आदान–प्रदान। दूतों की नियुक्ति तथा उन्हें प्रतिनिधि के रूप में दूसरे राज्यों में भेजना तथा दूसरे राज्यों के दूतों का दरबार में स्वागत करना अथवा उनसे मिलना राजा की ही जिम्मेदारी थी। दूतो की नियुक्ति में राजा मंत्रियों से परामर्श करता था तथा मंत्रियों के साथ विदेशी दूतों का स्वागत दरबार में करता था। कौटिल्य ने भी दूतों के विषय में विशद्रूप से चर्चा की है। उसे राजा का मुख कहा गया है।[112] दूतों के आचरण के सम्बन्ध में कौटिल्य ने चर्चा की है। उसने दूतों के तीन श्रेणियों का उल्लेख किया है। निसृष्टार्थ श्रेणी के दूत अमात्यों की योग्यता वाले होते हैं जिन्हें विशेष कार्य के लिए दूसरे राजा के पास भेजा जाता था। इन्हें आधुनिक कालिन राजदूत के समकक्ष माना जा सकता है। इस श्रेंणी के दूत से कम योग्यता तथा कम अधिकार वाले परिमिताथ दूत की श्रेणी में आते थे। इनसे कम योग्यता वाले शासनहार श्रेणी के दूत होते थे। इनका कार्य था दूसरे राजा के सम्मुख अपने स्वामी राजा का संदेश पहुँचाने अथवा वार्ता करने का कार्य नहीं करता था बल्कि पर–राजा शक्ति एवं कमजोरियों की जानकारी प्राप्त करना भी था। यह कार्य उसे गुप्तचरों की सहायता से करना चाहिए। इन कमजोरियों से लाभ उठाना भी उसके कार्य में सम्मिलित था। उसका कार्य शत्रु के मित्रों में भेद उत्पन्न करना भी था। कौटिल्य ने मारण, मोहन, उधाटन आदि के प्रयोग का भी परामर्श दिया है।[113]

कौटिल्य ने दूतों का अबध्य माना है। इनकी अबध्यता को धर्मगत और नीतिगत कहा है। [114] रामायण एवं महाभारत में भी दूतों की अबध्यता पर बल दिया गया है।[115] कौटिल्य के अनुसार अगर दूत चांडाल हो तब भी अबध्य अर्थात् ब्राहम्ण् दूता तो निस्संदेह अबध्य होंगे।[116] कौटिल्य ने अन्तर्राज्य सम्बन्ध पर विस्तारपूर्वक विचार किया है तथा उसने इस दिशा में शक्ति संतुलन पर जोर दिया है। इससे सभी राज्य शांतिपूर्वक अपने राज्य में बसने वाली प्रजा के सुख एवं समृद्ध के लिए कार्य कर सकता है। कौटिल्य ने राजनय को महत्व दिया है। कौटिल्य के अनुसार अंतर्राष्ट्रीय सम्बन्ध में राजा के साथ–साथ उसके अमात्यों की भी महत्वपूर्ण भूमिका होती है। उसके अनुसार विजिगीषु राजनय का केन्द्रबिन्दु है। पुरोहित उसके राजनय को अनुशासित करता ह और अमात्य उसे संचारित करता है।[117] मणिशंकर प्रसाद के इस निष्कर्ष से हम सहमत हो सकते हैं कि "कौटिल्य का राजनय सिद्धांत अपने आप में साध्य नहीं है, वरन् राजा की रक्षा और वृद्धि का एक महत्वपूर्ण साधन है। कौटिल्य का राजनय सिद्धांत कई दृष्टियों से आज भी प्रासंगिक है। कौटिल्य की तरह आज भी सभी राज्यों के शासक राजनयिक सम्बन्धों में अपने राज्य के हितों की रक्षा और संवर्द्धन को प्राथमिकता देते हैं।"[118]

निष्कर्ष

यह कहा जा सकता है कि कौटिल्य द्वारा चित्रित प्रशासकीय व्यवस्था अनेक प्रकार से सुगठित तथा सुसज्जित थी। जिसमें अंतर्राज्य संबंध कौटिल्य की व्यवस्था के महत्वपूर्ण अंग थे जिसपर राजा स्वयं नियंत्रण रखता था तथा उनमें रूचि लेता था। जिसमें मंडल सिद्धांत तथा षाडगुण्य नीति महत्वपूर्ण है जिसका उन्होंने वर्णन किया है मंडल का अर्थ राज्यों का वृत माना जाता है। मानवीय स्वभाव के अनुसार प्रत्येक राजा राज्य विस्तार कि नीति को अपनाता है। कौटिल्य ने षाडगुण्य सिद्धांत के विभिन्न पहलुओं पर भी विचार किया अतः युद्ध एवं संधि राजा अथवा केंन्द्रीय शासन की जिम्मेदारी था। यहॉ यह ध्यान देने की बात है कि कौटिल्य ने सशक्त राजतंत्र को ध्यान में रखते हुये प्रशासनिक तत्रं के स्वरूप और संगठन का निर्धारण किया है। जबकि वर्तमान प्रशासनिक तंत्र लोकतांत्रिक व्यवस्था के लिए है। इसलिए इन दोनों की तुलना करना आवश्यक है।

संदर्भ–सूची

107 – अर्थशास्त्र, 5/2
108 – आर.पी. कांगले, पूर्वोक्त ग्रंथ, खंड–3, पृ0 128
109 – मणिशंकर प्रसाद, पूर्वोक्त ग्रंथ पृ0 –105
110 – अर्थशास्त्र, 7/1
111 – वही, 7/4

112 – दूतमुखा वं राजानस्त्व चान्ये य। अर्थशास्त्र 1/16
113 – अर्थशास्त्र 1/15 मणिशंकर प्रसाद, पूर्वोक्त ग्रंथ, पृ0 – 126
114 – अर्थशास्त्र 1/15
115 – वाल्मीकि रामायण, सुन्दरकांड, संर्ग–52, श्लोंक–19, महाभारत, शांतिपर्व, अध्याय–85, श्लोक–26
116 – एम. वी. कृष्णराव, स्टडीज इन कौटिल्य, पृ0 41
117 – वही, पृ0 – 154
118 – मणिशंकर प्रसाद, पूर्वोक्त ग्रंथ, पृ0 129

RRIJM 2015, All Rights Reserved